किसान जीवन की त्रासदी और 'फाँस'

"हमें केवल किसान ही मुक्ति दिला सकते हैं वकीलों ,डॉक्टरों या धनी जमीदारों के बूते की बात नहीं है |" 1 – महात्मा गाँधी

भारत में विकास और खुशनुमा प्रगति के आंकड़ों के बीच किसानों की आत्महत्या का सिलसिला थम नहीं पा रहा | समस्या यह है कि कृषि संकट अथवा किसान की उपेक्षा निरंतर की जा रही है | भारत में लगभग 84 करोड़ लोगों की जीविका खेती पर निर्भर है | किसानों की औसत प्रति व्यक्ति आमदनी 40 रूपये प्रति दिन से कम है | जब से देश के निजीकरण,उदारीकरण और वैश्वीकरण की काली आंधी चली, तब से सरकारी आंकड़ों के मुताबिक तीन लाख से अधिक किसान आत्महत्या कर चुके हैं | आज भी हर रोज 46 किसानों की आत्महत्या की खबर आ रही हैं ,यानी हर घंटे में एक किसान अपनी जीवन लीला समाप्त करने को मजबूर है | ये आंकड़ें भी सही तस्वीर सामने नहीं लाते, क्योंकि सरकारी पैमाने के मुताबिक बटाईदार या ठेके पर जमीन लेकर खेती करने वाले या महिलाएँ किसान नहीं हैं | राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण के मुताबिक भारत के गांवों में 70फीसदी महिलाएं खेती के काम में लगी हैं लेकिन सरकार उनकों किसान नहीं मानती क्योंकि वे जमीन की मालकिन नहीं हैं |

संजीव को आज एक ऐसे कथाकार के रूप में पहचाना जा रहा है जो एक विषय पर पहले अनुसंधान करते है और फिर उस अनुसंधान का पक्ष अपनी सृजन धर्मिता में तब्दील कर पाठक संसार को सौंप देते हैं | उनके अनुसार – **"साहित्य कोई निष्क्रिय उत्पाद नहीं है | मनुष्य की उर्जा को मनुष्य के लिए इस्तेमाल करते हुए उसे मनुष्य बनाये रखना हैं |"2**

कथाकार संजीव का उपन्यास 'फाँस' भारतीय कृषक समाज की वर्तमान दारुण दशा पर केन्द्रित है | संजीव ने इस उपन्यास में किसानों की आत्महत्या, तबाही ,कर्ज में दबे किसानों की समस्या को बड़ी सूझ-बूझ और मनोयोग से चित्रित किया हैं | उन्होंने किसानों की आत्महत्या के कारणों को भूमंडलीकरण से जोड़ा है | आज बड़ी संख्या में किसानों की आत्महत्या पुरे तन्त्र पर सवालिया निशान है | समस्या जितनी विकट है ,साहित्य में उसका आकलन उतना ही कम मिलता है | 'फाँस' के माध्यम से संजीव ने किसानों से जुड़े सभी पहलुओं को देखने की कोशिश की हैं |

'फाँस को पढना आज के समय में देश की सबसे अवसादपूर्ण घटनायों से, हादसों की एक लम्बी श्रृंखलायों से गुजरना ,उससे रूबरू होना है | यह एक ऐसे विषय को हमारे सामने खड़ा करता है जिससे हम लगातार मुंह छिपाते आये हैं और वह लगातार प्रेतछाया से हमारे अतीत,वर्तमान और भविष्य पर मंडराता रहा है | 'फाँस' किसी एक किसान,किसी एक खेतिहार परिवार,किसी एक गाँव या फिर किसी एक खेती-किसानी की समस्या की कथा नहीं है ,बल्कि आज के सभी किसानों की समस्या की कथा का आख्यान है |

'फाँस' उपन्यास में महाराष्ट्र के यवतमाल जिले के गाँव के बनगाँव का चित्रण किया गया है लेकिन इसमें आंध्रप्रदेश व कर्नाटक के किसानों सहित भारत के उन सभी किसानों की कहानियाँ शामिल है, जिन्हें पहले जी.एम. बीजों का इस्तेमाल करने के लिए फुसलाया गया और फिर कर्ज दिया गया| लेकिन कुछ सूखे की मार और कुछ प्रकृति के साथ अनाचार के कारण सीधे- सादे किसानों की जिन्दगी कर्ज और सूखे के बोझ तले इस तबाही में आत्महत्या की तरफ बढती गयी| बहुत ज्वलंत मुद्दा चुना है संजीव ने और शायद हिंदी में पहली बार प्रेमचंद के 'गोदान' के बाद किसानों और गाँव की पूरी जिन्दगी का दर्द व कसमसाहट सामने आई है |

विदर्भ के यवतमाल जिले के बनगाँव के एक शेतकारी (किसान) शिबू और शकुन और उनकी दो मुलगियों (बेटियों), छोटी (कलावती) और बड़ी (सरस्वती) के तमाम मुश्किलों, दुःख तकलीफों के बीच भी अपनी दुनियाँ, अपने सपनों में रमें परिवार के जीवन के किसी एक आम दिन से शुरू होने वाली यह कथा धीरे-धीरे किसानों के जीवन के कई अँधेरे-उजाले पहलुओं को झांकते हुए आगे बढ़ती है | एक किसान की कहानी मात्र एक घर, एक खेत, एक दुःस्वप्न व एक आत्महत्या से शुरू होने वाली कहानी ही नहीं है बल्कि कई किसान, कई घर, अनगिनत नष्ट फसलें और अनगिनत टूटते सपने और अनगिनत हत्याओं की कहानियाँ जुड़ते-जुड़ते यह देश भर के लिए अन्न उपजाने वाले किसानों की हत्याओं और उनके साथ की जाने वाली साजिशों की महागाथा बन जाती है | छोटी-छोटी दिखने वाली समस्याएँ धीरे-धीरे जटिल होकर देश भर के किसानों के सामने उसे और उसके परिवार को लील जाने को तैयार खड़ी, वर्तमान समय की बड़ी त्रासदियों में बदल जाती है | इसे पढ़ते हुए 'भारत एक कृषि प्रधान देश है |' आज का सबसे त्रासद, विद्रूप पैदा करने वाला और विडम्बनाओं से भरा हुआ वाक्य लगने लगता है |

यह उपन्यास शुरू से लेकर अंत तक हमें किसान जीवन की दुश्वारियों से, त्रासदियों से, विद्रूपताओं और विडम्बनाओं से रूबरू कराता है | 'इतनी मिश्किल है तो खेती छोड़ क्यों नहीं देते |' जैसे जुमलों के जवाब में यह बताता है कि आज भी भारत में खेती-किसानी मात्र एक जीविका का साधन नहीं है बल्कि एक जीवन पद्धति है जिसे आधिकांश किसान चाहकर भी मुंह नहीं मोड़ सकते, यह किसान परिवार का बच्चा-बच्चा जानता है | कथा की शुरुवात में छोटी शिबू को आगाह करती है – **"शेती-खेती कोई धंधा नहीं बल्कि एक लाइफ स्टाइल है – जीने का तरीका, जिसे किसान अन्य किसी भी धंधे के चलते नहीं छोड़ सकता | सो तुम बाबा लाख कहो की शेती छोड़ दोगे, नहीं छोड़ सकते | किसानी तुम्हारे खून में है |"** 3

यदि गोदान में प्रेमचंद ने होरी के किसानी प्रवृति का मार्मिक तरीके से वर्णन किया था तो संजीव ने 'फाँस' में शिबू नामक किसान को केंद्र में रखकर आज के भारतीय किसान की वास्तविक स्थिति का वर्णन किया है | वह जीना चाहता है पर कर्ज उसे जीने नहीं देता, वह अपने बच्चों को पढ़ाना चाहता है पर जहाँ

भोजन के लाले पड़े हों वहां कुछ और सोचना भी संभव नहीं है, मौसम की मार हो या बैंक का कर्ज या फिर साहूकारों के रक्तचूस ब्याजदर, फाँस चाहते न चाहते हुए भी किसानों के गले में लटकना तय है |

किसानों के प्रति यदि सरकारी रवैये की बात करें तो, उनके पास उद्योगपतियों के करोंडो रुपये के कर्ज माफ कर देने और उन्हें सहूलियत देने के लिए पर्याप्त धन है, लेकिन किसानों के कर्ज माफ़ी पर चुप्पी दिखती है | आज जब सिंचाई के आभाव में किसानों की फसल सूख रही हैं, गाँवों में खेती के सहारे जीवन-यापन करने वाले किसानों का जीना मुहाल हो गया है, ऐसे संकट के समय में सरकार पेप्सिको, कोक आदि विदेशी कंपनियों को मीठा पानी उपलब्ध करा रही है | सरकार की चिंता के केंद्र में किसान के सूखते जमीन के लिए पानी नहीं अपितु उद्योगपतियों के व्यवसाय के लिए पानी है | ऐसी योजनाओं के कारण ही हमारे नीति नियंताओ पर अविश्वास होता है |

पिछले कई वर्षो में किसानों की आत्महत्या का डाटा देखने पर यह सोचने को मजबूर होना पड़ता है कि ये आत्महत्या है या कथित हत्या ? इस फर्क को समझे जाने की जरुरत है | इसी जरुरत को संजीव ने अपने शोधपरक उपन्यास 'फाँस' में दिखाया है- **"1997-2006 तक यहाँ 15 हजार किसान आत्महत्या कर चुके थे | समूचे देश में यह संख्या ढाई लाख तक पहुँच गयी थी |"** [4]

किसानों की इतनी बड़ी आबादी द्वारा आत्महत्या करने के बावजूद यह मुद्दा भारतीय राजनीति का केन्द्रीय मुद्दा क्यों नहीं बन पाता है ? उद्योग व्यापार के साथ परस्पर कदमताल करती हुई एक ठोस कृषि नीति बनाने और उस पर अमल करने के बजाय सिर्फ आर्थिक-पैकेट के दिखावटी टोटकों के सहारे इस समस्या को जिन्दा रखते हुए कृषि-व्यवसाय को लगातार हाशिये पर धकेलते जाने वाली तथाकथित आर्थिक नीति का सच क्या है ? सरकारी बैंकों की पंजिकाओं में दर्ज किसान- कर्ज के आंकड़ों के मुकाबले महाजनी व्यवस्था के चंगुल में बिना आवाज़ कराहते कृषक समूह की त्रासद हकीकतें कहाँ दर्ज होती हैं ? इन जैसे कई अन्य महत्वपूर्ण और ज्वलंत प्रश्नों को केंद्र में रखकर लिखा गया है संजीव का उपन्यास 'फाँस'|

'फाँस' किसानों की आत्महत्यओ के भयावह दृश्य दिखाकर, समाप्त नहीं होता बल्कि यह खेती- किसानी और उससे जुड़े समाज के आर्थिक, सामाजिक तथा वैज्ञानिक पहलुयों का, क्षेत्र विशेष में प्रयुक्त फसलों की विभिन्न किस्मों का , खेती की विधियों का, प्रयुक्त बीजों का, कीटनाशको के प्रयोग आदि का गहन विश्लेषण करते हुए किसानों की समस्याओं के राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक कारणों की पड़ताल भी करता है और समाधान भी खोजता है | यही कारण है कि यह उपन्यास दो भागों में बंटा दिखता है | पहला किसान के दुःख –दर्द ,उनके संघर्ष,असफलताओं और उनकी आत्महत्याओं की केस स्टडी की तरह सामने आता है जो

समस्याओं के कारणों की शिनाख्त करता है ,जिससे यह विदर्भ से शुरू होकर पूरे देश के किसानों की समस्याओं को समेटता हुआ उन सबकी की करुणगाथा बनकर उभरता है |तो दूसरा हिस्सा वह है जो इन समस्याओं के समाधान की ख़ोज में आगे बढ़ता है |इसमें वे पात्र प्रमुखता पाते हैं जो मृतकों के जाने के बाद समय और समस्याओं से जूझने के लिए बचे रह गए हैं ,जो जान गए हैं कि जान देने भर से कुछ बदलने वाला नहीं, अगर कुछ बदलना है तो जीना होगा ,लड़ना होगा |

सुनील का बेटा विजेंद्र ,शिबू और शकुन की बेटी कलावती ,बड़ी बेटी सरस्वती ,खुद शकुन ,सिन्धु ताई ,कलावती के बचपन का साथी अशोक ,मंगल मिशन पर जाने वाला मल्लेश आदि इन सभी को एक सूत्र में पिरोनें वाला कुछ –कुछ कथा का सूत्रधार फक्कड़ नाना और किसानों के लिए आदर्श दादा जी खोबरागड़े| यह सभी पात्र निराशा और टूटन के वातावरण के बीच कथा का प्रतिपक्ष रचते हैं | ये विचार के लिए मंथन जैसा मंच खड़ाकर किसानों को और उनकी मदद करने वालों को एक जगह एकजुट करते हैं | उन्हें खेती करते हुए भी पैसा जुटाने, फसलों के अच्छे परिणाम प्राप्त करने के वैकल्पिक रास्ते सुझाते हैं | वे बताते हैं कि जहाँ हालात के आगे घुटने टेकते ,आत्महत्या करते किसान है , वहीं हालात से जूझने वाले ,धान की नई किस्म विकसित करने वाले ,समाज में एक विशेष स्थान रखने वाले ,बड़े से बड़े दुःख के आगे घुटने न टेकने वाले दादाजी खोबरागड़े भी हैं | पेड़ों से झूलती लाशें केवल देश की वयवस्था से, सरकारों से सवाल नहीं करती बल्कि वह हम सबको सवालों के घेरे में खींच कर खड़ा कर देती है | 'फाँस' तमाम जरुरी सवालों के साथ हमें सोचने पर विवश कर देता है |

इस उपन्यास में संजीव ने विदर्भ की बोलियों के शब्दों को शामिल किया है, जिससे उसके ग्रामीण परिवेश की पहचान पुख्ता होती है, परन्तु उनके दूसरे उपन्यासों में मौजूद गठन की कमी यहाँ खलती है, जो हिंदी साहित्य से अनजान पाठकों को भी अपनी ओर खींच सके | बहरहाल शिल्पगत कमजोरियों के बाद भी संजीव का यह शोधपरक उपन्यास भारतीय किसानों के जीवन का वह आईना है जो देश में कृषि-व्यवस्था से लेकर रियासत तथा नौकरशाही की सच्ची झांकी दिखाता है |

सारांशतः यह कहना गलत न होगा कि एक ओर जहाँ हम विकसित हो रहे हैं वहीं दूसरी ओर किसानों के मामले में पिछड़ते जा रहें हैं | समय बीत गया है किन्तु आज भी किसानों की दशा गोदान के होरी से कुछ अलग नहीं हो पाई है | अंतर है तो केवल इतना कि गोदान में होरी की मृत्यु परिस्तिथिजन्य प्राकृतिक तौर से होती है जबकि फाँस या वर्तमान का किसान स्वयं ही आत्महत्या करने पर विवश है | या यों कहे कि गोदान के किसान की जो त्रासदी थी वह आज भी बरकरार है | फाँस उपन्यास इसका सबसे बड़ा उदाहरण है |हालाँकि फाँस उपन्यास में कई पात्र इस त्रासदी से उभरने का भी रास्ता सुझाते है ,किन्तु फिर भी यह कहना ग़लत न होगा कि 'फाँस' खतरे की घंटी भी है और आत्महत्या के विरुद्ध दृढ़ आत्मबल प्रदान करने वाली चेतना और जमीनी संजीवनी का संकल्प भी |

संदर्भ ग्रन्थ

1 महात्मा गाँधी के भाषण का अंश – काशी हिन्दू विश्विद्यालय, 1916

2 किसान जीवन की करुण गाथा –डॉ. वंदना तिवारी

3 फाँस –संजीव ,वाणी प्रकाशन, प्रथम संस्करण 2015 ,पृष्ठ संख्या . 17

4 वही, पृष्ठ संख्या 66